जैन धर्म में सल्लेखना/संथारा/समाधि

मुनिश्री १०८ प्रमाण सागर जी महाराज

''**सल्लेखना और संथारा** '' के सम्बन्ध में राजस्थान हाईकोर्ट द्वारा दिनांक 10/8/2015 को जो निर्णय दिया गया उसको लेकर जैन समाज बड़ी उद्वेलित है और यह शांतिपूर्ण ''धर्म बचाओ आन्दोलन'' चल रहा है, यह उसी राजस्थान हाईकोर्ट के निर्णय के सम्बन्ध में है। हमारा यह ''धर्म बचाओ आन्दोलन'' क्यों उचित है इस सम्बन्ध में हम निम्न प्रश्नोत्तर चर्चा द्वारा अपना प्रकरण समस्त देश के समक्ष रख रहे हैं ताकि संथारा और सल्लेखना की अवधारणा सभी के समक्ष स्पष्ट हो सके।

प्रश्न. १- सल्लेखना शब्द का अर्थ क्या है ?

उत्तर- सल्लेखना शब्द सत्+लेखन से बना है। सत् अर्थात अच्छे तरीके से और लेखन अर्थात देखना अथवा कृष करना। अपने शरीर को तथा अपनी कषायों को मरण समय उपस्थित होने पर धीरे-धीरे शरीर की शुद्धि और आत्मा की विशुद्धि करते हुए अपनी अंतिम श्वास छोड़ने का नाम सल्लेखना है।

प्रश्न. २- जैन साधना में सल्लेखना का क्या महत्त्व है ?

उत्तर- जैन साधना में सल्लेखना का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है। जैन शास्त्रों में कहा गया है कि सल्लेखना के अभाव में जीवन भर की साधना निष्फल है, जैसे कोई छात्र पूरे वर्ष भर पढ़ाई करे और परीक्षा के अवसर पर विद्यालय से नदारद हो जाएँ तो उसका पूरा वर्ष नष्ट हो जाता है। उसी तरह सारे जीवन भर धर्म साधना करने वाला व्यक्ति जीवन के अन्त में यदि सल्लेखना या संथारा धारण न कर पाये तो उसकी साधना निरर्थक है। इसी कारण सल्लेखना को जैन धर्म का प्राण कहा है।

प्रत्येक जैन साधक अपने मन में यह प्रबल भावना रखता है कि मेरा मरण संल्लेखना, समाधि या संथारा पूर्वक हो। शास्त्रों में ऐसा कहा गया है कि उसी भव में मोक्ष जाने की योग्यता रखने वाला पुरुष यदि एक बार विधि पूर्वक सल्लेखना ले लेता है तो सीधे मोक्ष जाता है। यदि संल्लेखना मध्यम रीति से की जाएँ तो उस पुरुष को तीसरे भव में तथा यदि सामान्य रीति से करें तो वह जीव आठवें भव में मोक्ष प्राप्त कर लेता है। सल्लेखना की बहुत महिमा है इसी कारण सभी धर्मात्मा पुरुष मरण समय इस व्रत की आराधना अवश्य करते हैं।

प्रश्न. ३- किसी साधक के द्वारा सल्लेखना कब की जाती है ?

उत्तर- जैन शास्त्रों के आचरण संबंधी महान् ग्रंथों में रत्नकरण्डक श्रावकाचार, जिसके रचयिता आचार्य समन्तभद्र मुनि महाराज हैं, जिनका समय ईसा की दूसरी-तीसरी शताब्दी है, सल्लेखना करने के सम्बन्ध में यह श्लोक दिया है :-

उपसर्गे दुर्भिक्षे जरसि रुजायां च निःप्रतीकारे।

धर्माय तनुविमोचनमाहुः सल्लेखनामार्याः।। १२२।।

अर्थ- जिसका प्रतीकार संभव न हो ऐसे उपसर्ग आने पर, अकाल पड़ने पर, बुढ़ापा आने पर, और मृत्युदायक रोग होने पर धर्म के लिए शरीर छोड़ने को सल्लेखना कहते हैं।

इस श्लोक के अर्थ में सबसे महत्त्वपूर्ण शब्द ''**जिसका प्रतीकार संभव न हो**'' है। अर्थात् उपसर्ग होने पर, अकाल पड़ने पर, बुढ़ापा आने पर और मृत्यु दायक रोग उपस्थित हो जाने पर जैन साधक सर्वप्रथम उससे बचने या ठीक होने का हर संभव प्रयास करता है। जब वह देखता है कि शरीर का सिस्टम खत्म हो गया है, शरीर अब कुछ भी स्वीकार नहीं कर रहा है, डॉक्टरों ने भी रोग को लाइलाज कह दिया है तब वह, यह जानते हुए कि शरीर तो छूटना ही है तब फिर क्यों न जीवन की आखिरी सांस तक धर्म से जुड़े रहते हुए शरीर को छोड़ा जाएँ और तब वह किन्हीं आचार्य के निकट जाकर आत्मदृष्टा बने रहते हुए अपने शरीर को धर्मपूर्वक छोड़ने की जो साधना करता है उसका नाम सल्लेखना है।

प्रश्न. ४- सल्लेखना क्यों की जाती है ?

उत्तर- सल्लेखना मरने के लिए नहीं ली जाती बल्कि मोक्ष पाने के लिए ली जाती है। मुक्ति की भावना से, न तो जीने के लिए, न ही मरने के लिए, अपितु जीवन मरण से ऊपर उठने के लिए सल्लेखना ली जाती है। इसको लेने का एक ही लक्ष्य है कि साधक अपने जीवन की अंतिम श्वास तक धर्म से जुड़ा रहे।

प्रश्न. ५- क्या सल्लेखना किसी के दवाव में की जाती है या स्वेच्छा से की जाती है ?

उत्तर- जैन धर्म के प्रमुख शास्त्र श्री तत्त्वार्थसूत्र, जिसके रचयिता आचार्य उमास्वामी महाराज (समय ईसा की दूसरी शताब्दी) है, में उपरोक्त प्रश्न के उत्तर में इस प्रकार कहा है :-

मारणान्तिकीं सल्लेखनां जोषिता।। ७/२२।।

अर्थ- अंतिम समय उपस्थित होने पर साधक को प्रीति पूर्वक संल्लेखना धारण करनी चाहिए। यहाँ ''**प्रीति पूर्वक**'' शब्द बहुत महत्त्वपूर्ण है जो यह बता रहा है कि किसी के दबाव में, बहकाव में अथवा प्रलोभन में आकर सल्लेखना नहीं की जाती। यदि की जाती है तो वह सल्लेखना नहीं है।

जीवन के अंतिम दिनों में तो पशुपक्षी भी खाना-पीना बन्द कर देते है। अस्पतालों में भी अंतिम समय आ जाने पर खाना-पीना बन्द कर दिया जाता है। इसी प्रकार शरीर ने भोजन या दवा आदि स्वीकार करना बन्द कर दिया है तो वह साधक प्रीति पूर्वक और धर्म पालनार्थ सल्लेखना स्वीकार करता है। जब तक साधक पूर्ण रूप से तैयार न हो, उसकी पूरी इच्छा न हो, आचार्य उसको सल्लेखना नहीं देते हैं।

जैन शास्त्रों में सल्लेखना के दोष इस प्रकार कहे हैं-

जीवितमरणाशंसामित्रानुरागसुखनुबन्धनिदानानि।। तत्त्वार्थ सूत्र ७/३७।।

अर्थ- यदि कोई साधक सल्लेखना लेने के बाद अधिक जीने की इच्छा करता है, पीड़ा आदि के कारण जल्दी मरने की इच्छा करता है, पुराने मित्रों को स्मरण करता है, भोग हुए सुखों का चिंतन करता है और भविष्य में भोगों की आकांक्षा करता है तो उसकी सल्लेखना में ये दोष लगते है। अतः साधक जल्दी मरने की इच्छा न करता हुआ अत्यंत शांति पूर्वक तथा धर्माराधना सहित सल्लेखना करता हुआ शरीर छोड़ता है।

प्रश्न. ६- सल्लेखना की कोई सीमा या आयु है क्या ?

उत्तर- जैन शास्त्रों में जीवन के अन्त में जो **शारीरिक लक्षण** दृष्टिगोचर होने लगते है, उनका ''**रिष्ट समुच्चय**'' नाम ग्रन्थ में अच्छी प्रकार वर्णन किया गया है। इन लक्षणों के आधार पर व्यक्ति के जीवन का अनुमान लगा लिया जाता है, तथा डॉक्टरों से भी इस संबंध में राय ले ली जाती है कि वास्तव में अब ज्यादा जीवन का समय शेष नहीं है। तब वह साधक सल्लेखना स्वीकार करता है।

सल्लेखना परिस्थिति अनुसार भी ली जाती है। जैसे अचानक भूकम्प आने लगे और मुझे लगे कि मैं बच नहीं सकता हूँ, तब इस प्रकार की सल्लेखना ली जाती है कि जब तक यह भूकम्प है उतनी देर के लिए मै सल्लेखना लेता हूँ। इस स्थिति में मेरा देहांत हो गया तो मैं सल्लेखना पूर्वक मरण करूंगा और परिस्थिति सामान्य हो गई तो मैं पुनः सामान्य जीवन बिताऊंगा। इस प्रकार जैन शास्त्रों में दोनों तरह की व्यवस्थाएँ है, जोर जबरदस्ती से सल्लेखना नहीं कराई जाती।

प्रश्न. ७- क्या सल्लेखना सतीप्रथा जैसी नहीं है ?

उत्तर- नहीं, बिल्कुल नहीं। जब कोई स्त्री अपने पति के प्रति ज्यादा राग और आसक्ति रखती है तो वह उसके साथ उसे भावी जन्म में पुनः पति के रूप में प्राप्त करने के लिए पति के साथ ही अपना शरीर अग्नि में समर्पित कर देती है। सामाजिक परिस्थितियाँ तथा शील की रक्षा भी इसके पीछे एक कारण हो सकता है। लेकिन जैनधर्म में ऐसा बिल्कुल नहीं है। सतीप्रथा (जो कानूनी रुप से प्रतिबंधित है) एक कुप्रथा थी, जबकि सल्लेखना एक महान् साधना है, व्रत है, धार्मिक अनुष्ठान है, महोत्सव है। सल्लेखना भोग विलासिता के लिए नहीं है, साधना के लिए है और शीघ्र ही मोक्ष प्राप्ति का उपक्रम है। इसलिए इसको जैन साधना का प्राण तत्व कहा गया है।

प्रश्न. ८- क्या सल्लेखना को इच्छा मृत्यु से जोड़ा जा सकता है ?

उत्तर- इच्छा मृत्यु और सल्लेखना में बहुत भिन्नता है। इच्छा मृत्यु, मृत्यु की इच्छा से जब कभी स्वीकार की जा सकती है। कोई भी व्यक्ति किसी भी अवस्था में इच्छा मृत्यु स्वीकार कर सकता है जबकि जैन धर्म में इच्छा मृत्यु को भी गलत बताया गया है।

जैन धर्म की विशेषता है कि जब तक मेरा शरीर है, मुझे साधना की अनुकूलता है तब तक मैं साधना करूं। आखिरी श्वास तक आत्मा के साथ एहसास करूं, प्रभु का नाम स्मरण करूं और साधना पूर्वक शरीर छोड़ू।

प्रश्न. ९- क्या सल्लेखना लेना आत्म हत्या नहीं है ?

उत्तर- प्रमुख जैन शास्त्र पुरुषार्थसिद्धुपाय (रचयिता आचार्य अमृतचन्द स्वामी, समय दसवीं शताब्दी) में इस संबध में इस प्रकार कहा है-

मरणेऽवश्यं भाविनि कषायसल्लेखनातनूकरणमात्रे।

रागादिमन्तरेण व्याप्रियमाणस्य नात्मघातोऽस्ति।। १७७।।

अर्थ- मरण के अवश्य ही होनहार होते हुए, कषाय सल्लेखना के कृष करने मात्र व्यापार में उद्यमान पुरुष के, रागद्वेषादि भाव न होने से आत्मघात नहीं है।

यो हि कषायाविष्टः कुम्भक जलधूम केतु विषशस्त्रैः।

व्यपरोपयति प्राणान् तस्य स्यात्सत्यमात्मवधः।। १७८।।

अर्थ- क्रोध आदि कषायों से घिरा हुआ जो पुरुष श्वास निरोध, जल, अग्नि, विष या शस्त्रादिकों से अपने प्राणों को नष्ट कर देता है उसके आत्मघात वास्तव में होता है।

इस श्लोक में कषायाविष्ट शब्द बता रहा है कि क्रोध, मान, माया, लोभ, आर्थिक नुकसान, पराजय या अन्य कारणों से अत्यंत परेशान अनुभव करता हुआ जब श्वास निरोध, पानी में डूब मरना, अग्नि में जल जाना, बंदूक आदि से अपना घात कर लेना, पहाड़ से गिरना, रेल से कट मरना तथा जहर आदि खाकर प्राण नष्ट करता है तब आत्मघात कहा जाता है। जबकि सल्लेखना में कोई परेशानी नहीं है यह तो वास्तव में आत्मलीनता है। अपनी आत्मा में तल्लीन होकर धर्म करते हुए, प्रभु भजन करते हुए शरीर छोड़ने का नाम सल्लेखना है।

आत्महत्या में मरने वाले का लक्ष्य तुरंत मर जाना है जबकि सल्लेखना में मृत्यु पर्यंत धर्म ध्यान करना है। मृत्यु एक अनिवार्य सत्य है, उसे कोई नहीं टाल सकता। जैनधर्म कहता है कि हे साधक! मरण होना ही है लेकिन धर्म की श्वास लेते हुए शरीर छोड़ो। साधना की श्वास लेते हुए मरो। जैन साधना का मूल भेद-विज्ञान है अर्थात शरीर और आत्मा की भिन्नता का अहसास हो जाना। सल्लेखना तथा आत्म हत्या का अंतर इस प्रकार भी समझा जा सकता है :-

सल्लेखना	आत्महत्या
■ सल्लेखना धर्म है	■ आत्महत्या अपराध है, पाप है
■ समता से प्रेरित होकर ली जाती है	■ कषाय से प्रेरित होकर ली जाती है
■ परम प्रीति और उत्साहपूर्वक	■ तीव्र मानसिक असंतुलन, घोर हताशा और अवसाद ग्रस्त स्थिति में
■ लक्ष्य जीवन मरण से ऊपर उठाना है	■ लक्ष्य केवल मरना है
■ आत्मा की अमरता, शरीर की नश्वरता को समझकर आत्मोद्धार के लिए	■ देह विनाश को अपना नाश मानकर की जाती है
■ जीवन के अंतिम समय में	■ जीवन में कभी भी की जा सकती है
■ सल्लेखना मोक्ष का कारण बनती है	■ आत्महत्या नरक का द्वार खोलती है

प्रश्न. १०- सल्लेखना की परम्परा नवीन है या प्राचीन?

उत्तर- यह धार्मिक परम्परा अनादि कालीन है। जैन शास्त्रों में प्राचीन काल से सल्लेखना करने वाले महापुरुषों की हजारों कथायें कही गई हैं। यदि इतिहास की दृष्टि से देखें तो सम्राट चन्द्रगुप्त को आदि लेकर सैकड़ों राजाओं और हजारों मुनिराजों एवं भट्टारकों ने समाधि पूर्वक शरीर छोड़ा

है, जिनके शिलालेख कर्णाटक के कटिवप्र पर्वत पर आज भी विद्यमान हैं। वर्तमान में भी आचार्य शांतिसागर महाराज को आदि लेकर पिछले ७०-८० वर्षों में सैकड़ों मुनियों, आर्यिकाओं, भट्टारकों व श्रावकों ने सल्लेखना पूर्वक आत्मलीन होकर शरीर छोड़ा जैन जिसका पूरा इतिहास हमारे पास आज भी सुरक्षित है। अतः यह अनादि कालीन शास्त्र सम्मत धार्मिक परम्परा है जो जैन धर्म की सर्वश्रेष्ठ परम्पराओं में कही जाती है।

हमारी भावना है कि यह अदालती फैसला वापिस होना चाहिए और भविष्य में जब कोई धार्मिक मामलों से संबंधित फैसले हों उनको समाज की धार्मिक भावनाओं को अच्छी तरह समझकर ही किये जाना चाहिए ताकि पुनः ऐसे आन्दोलन करने का अवसर न आये।

यह आन्दोलन सल्लेखना/संथारा की वास्तविकता को प्रगट करने का आह्वान है ताकि जनमानस के बीच सल्लेखना की अवधारणा स्पष्ट हो और समाज के बीच यह संदेश भी जाये कि धार्मिक मामलों पर बहुत गम्भीरता और सहानुभूति पूर्वक ही विचार होना चाहिए। क्योंकि इस तरह के अदालती फैसले से समाज व संस्कृति का बहुत नुकसान होता है। हम अहिंसात्मक तरीके से मौन पूर्वक जुलूस निकालकर अपना संकेत और संदेश समाज के बीच स्पष्ट कर रहे हैं।

संकलन : पं. रतन लाल जी बैनाड़ा

संल्लेखना उत्कृष्ट आध्यात्मिक साधना है,

आत्म हत्या नहीं।

संथारा/सल्लेखना...

...मृत्यु को महोत्सव बनाती है।

संथारा/संल्लेखना इच्छामृत्यु नहीं

मोक्ष महल प्राप्ति के लिए आराधना है।

संथारा/संल्लेखना के बिना साधक की साधना पूर्ण नहीं मानी जाती।

जन-जन की यही पुकार,

संल्लेखना/संथारा पर है अधिकार

मुनिश्री 108 आचार्य विद्या सागर जी महाराज

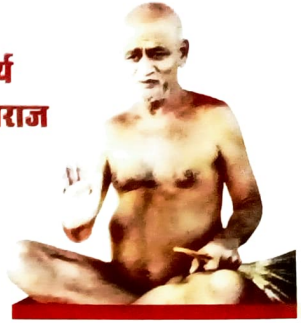

मुनिश्री 108 प्रमाण सागर जी महाराज

शंका-समाधान

जैन धर्म में सल्लेखना संथारा समाधि

मुनि श्री 108 प्रमाण सागर जी महाराज